भारतीय लिपियों का उद्‌वाचन

14 वीं शती ई. में फिरोज तुगलक के शासनकाल तक भारतीय पंडित अपने देश की प्राचीन लिपियों को पढ़ना भूल गये थे। किन्तु वे 7 वीं शती ई. के बाद की हस्तलिखित संस्कृत और प्राकृत पोथियां प्रयत्न करने पर पढ़ सकते थे। 1356 ई. में दिल्ली के सुल्तान फिरोजशाह तुगलक ने टोपरा तथा मेरठ से अशोक के दो स्तम्भ यत्नपूर्वक दिल्ली मंगवाये। उन स्तम्भों पर लिखे लेखों का वर्ण्य विषय जानने के लिये उसने राज्य भर के पंडितों और मौलवियों को एकत्र किया। परन्तु बहुत यत्न करने पर भी वे उन्हें पढ़ सकने में सर्वथा असमर्थ रहें।[1] कालान्तर में मुगल सम्राट अकबर[2] ने भी उन लेखों को पढ़वाने का प्रयत्न किया। उसकी जिज्ञासा शान्त करने के लिये तत्कालीन लाल बुझक्कड़ पंडितों ने उन अभिलेखों का 'वाचन' कर अकबर को बताया कि इनमें शहंशाह की प्रशंसा की गयी है और उनके साम्राज्य के अचल होने की भविष्यवाणी की गयी है। पंडितों के इस आशीर्वचन से अकबर अत्यन्त प्रसन्न हुआ। इस प्रकार भारतवासी अपनी प्राचीन लिपियों का ज्ञान पूर्णतया विस्मृत कर चुके थे। इन प्राचीन लिपियों के पुनः पढ़े जाने का इतिहास जितना सनसनीखेज है, उतना ही रोचक भी।

प्राचीन लिपियों के पढ़े जाने का आधुनिक इतिहास लगभग दो सौ वर्ष पुराना है जो भारत में अंग्रेजी सत्ता स्थापित होने से प्रारम्भ हुआ। अंग्रेजों तथा अन्य यूरोपीय पुराविदों ने इस दिशा में महत्वपूर्ण कार्य किये। संस्कृत और देशी भाषाओं पर शोध का आरम्भ हुआ। अंग्रेजों ने विद्यानुराग से संस्कृत पढ़ना प्रारम्भ किया और विलियम जोन्स ने कालिदास के शाकुन्तल नाटक का अंग्रेजी अनुवाद कर उसे विश्व के समक्ष प्रस्तुत किया। यह एक क्रान्तिकारी घटना थी, जिसने संसार भर के विद्वानों को संस्कृत भाषा और साहित्य के अध्ययन के लिये प्रेरित किया। परिणामस्वरुप 1784 ई. में विलियम जोन्स के प्रयत्न से एशिया के इतिहास, कला, पुरातत्व, धर्म और दर्शन आदि के शोध के लिये कलकत्ता में रायल एशियाटिक सोसायटी की स्थापना हुई। सोसायटी की स्थापना के बाद ही अनेक विद्वान् अपनी-अपनी रुचियों के विषयों के अध्ययन और शोध में लग गये। बहुत से विद्वानों ने भारत के प्राचीन अभिलेखों, ताम्रपत्रों, सिक्कों को अपने अध्ययन का क्षेत्र चुना। इस प्रकार विद्वानों की दृष्टि भारत की प्राचीन लिपियों की और अग्रसर हुई।

परवर्ती ब्राह्मी लिपि का उद्‌वाचन

सोसायटी की स्थापना के अगले वर्ष ही चार्ल्स विल्किन्स ने बादल के प्रस्तर स्तम्भ पर उत्कीर्ण पाल नरेश नारायणपाल की प्रशस्ति[3] पढ़ ली। उसी वर्ष राधाकान्त शर्मा ने अशोक स्तम्भ पर खुदे वीसलदेव चाहमान का लेख[4] पढ़ लिया। यद्यपि इन लेखों की लिपि बहुत प्राचीन न होने से वे सरलता से पढ़ लिये गये, तथापि इस प्रकार प्राचीन लेख पढ़े जाने का एक क्रम प्रारम्भ हो गया जो अनवरतरुप से ब्राह्मी लिपि के उद्‌वाचन तक चलता रहा। इसी वर्ष हरिंग्टन ने नागार्जुनी और बराबर पहाड़ियों की गुहाओं में मौखरी नरेश अनन्तवर्मा के कुछ अभिलेखों का पता लगाया। किन्तु उन अभिलेखों की लिपि पाल और चाहमान अभिलेखों से प्राचीनतर थी, अतः वे उन्हें पढ़ने में असफल रहे। चार्ल्स विल्किन्स ने अभिलेखों के अध्ययन में 1785-89 ई. तक के निरन्तर प्रयास से उन्हें पढ़ लिया जिससे प्रायः आधी गुप्त लिपि की वर्णमाला का ज्ञान हो गया।[5]

1818 से 1823 ई. तक कर्नल टाड ने राजस्थान के इतिहास पर शोध करते हुए राजस्थान तथा गुजरात में अनेक प्राचीन शिलालेखों का पता लगाया जो 7 वीं शती ई. से लेकर 15 वी शती ई. के बीच के थे। इनमें से कुछ अभिलेखों को वे अपेन गुरु यति ज्ञानचंद की सहायता से पढ़ने में सफल हुए।

अभी तक अनेक विद्वानों के अथक पूर्व परिश्रम के फलस्वरुप पढ़े गये लेख ऐतिहासिक दृष्टि से पूर्व मध्य युग के और प्रायः उत्तर भारत के थे। प्राचीनतर और दक्षिण भारत की लिपियों का पढ़ना शेष था। इनके रहस्य की कुंजी से विद्वान् अभी तक अनभिज्ञ थे। 19 वीं शती के प्रारम्भ में इस दिशा में प्रयत्न हुए। 1828 ई. में बैबीगटन ने मामल्लपुरम् के संस्कृत और तमिल

Scanned by CamScanner

लेखों के आधार पर वर्णमाला की एक सारणी बनाई।[6] बैंबीगटन से भी अधिक विस्तृत और वैज्ञानिक सारणी वाल्टर इलियट[7] ने बनाई जिसमें कन्नड़ वर्णमाला के प्राचीन रुपों का तुलनात्मक विवरण था।

गुप्तकालीन ब्राह्मी लिपि को समुचित ढंग से पढ़ने में कप्तान ट्रायर[8] ने महत्वपूर्ण प्रयास किया। उसने 1834 ई. में प्रयाग प्रशस्ति का कुछ अंश पढ़ लिया और उसी वर्ष डा. मिल[9] ने उसे पूरा पढ़ लिया। 1837 ई. में डा. मिल ने स्कन्दगुप्त का भीतरी स्तम्भलेख भी आद्यान्त पढ़ लिया।[10] लगभग इसी समय वाथन[11] ने गुजरात प्रान्त से प्राप्त वलभी नरेशों के अनेक ताम्रपत्रों को सफलतापूर्वक पढ़ा, तो भी, गुप्त लिपि पढ़ने में सबसे अधिक सफलता जेम्स प्रिन्सेप[12] को मिली जिसने दिल्ली, कहांव, एरण, सांची, अमरावती और गिरनार लेखों को पढ़ा। इस प्रकार ट्रायर, मिल, प्रिन्सेप के निरन्तर प्रयास से चार्ल्स विल्किन्स की गुप्त लिपि की अपूर्ण वर्णमाला पूर्ण हो गयी जिससे गुप्त राजवंश के शिलालेखों, ताम्रपत्रों और सिक्कों की लिपि सुगमतापूर्वक पढ़ी जाने लगी।

आद्य ब्राह्मी लिपि का उद्‌घाटन

ब्राह्मी लिपि गुप्त लिपि से प्राचीनतर होने के कारण दुरुह थी। अतः इसके पढ़े जाने में श्रम और समय दोनों अधिक लगा। सबसे पहले एलोरा के ब्राह्मी गुहालेखों ने विद्वानों का ध्यान आकर्षित किया। 1795 ई. में सर चार्ल्स मेलेट ने इन लेखों की छापें तैयार कर विलियम जोन्स के पास भेजी। जोन्स ने इन छापों को विल्फोर्ड के पास भेज दिया। विल्फोर्ड ने एक संस्कृत के पंडित के निर्देशन में इन अभिलेखों को किसी भी प्रकार पढ़कर जोन्स को वापस भेज दिया। कई वर्षों तक उन लेखों के पाठ की शुद्धता पर किसी को सन्देह न हुआ। किन्तु कालान्तर में अभिलेखों के पाठ कपोल कल्पित प्रमाणित हुए।

ब्राह्मी लिपि पढ़ने की दिशा में दूसरा चरण लासेन ने पूरा किया। 1836 ई. में उसने इण्डो-बैक्ट्रियन राजा अगाथोक्लीज के सिक्के का ब्राह्मी लेख पढ़ लिया। लेकिन लेख छोटा होने के कारण ब्राह्मी लिपि के बहुत कम अक्षरों का ज्ञान हो सका। ब्राह्मी लिपि के पूर्ण उद्‌वाचन का श्रेय जेम्स प्रिन्सेप को है। 1834-35 ई. में उसे इलाहाबाद, रधिया और मठिया स्तम्भलेखों की छापें प्राप्त हुई जिन्हें उसने देहली स्तम्भ लेख से मिलान किया। यह एक संयोग था कि चारों लेखों का वर्ण्यविषय एक निकला। इस सफलता से प्रोत्साहित होकर प्रिन्सेप ने इलाहाबाद स्तम्भलेख के अक्षरों को अलग-अलग छांटने पर पाया कि गुप्त लिपि के समान उनमें भी स्वरों की मात्राओं के लिए पांच चिह्न लगे हैं।[13] इससे आद्य ब्राह्मी और गुप्त लिपि की समरूप निरन्तरता प्रकट हो गयी और यह भ्रान्ति सदैव के लिये मिट गयी कि ब्राह्मी लिपि यूनानी अक्षरों से मिलता-जुलती है।[14] स्वरों के अभिज्ञान के बाद प्रिन्सेप ने अक्षरों के पहचानने का प्रयत्न किया। उसने उक्त लेख को गुप्त लिपि से मिलाकर एक से अक्षरों को वर्णमाला में क्रमवार रखना प्रारम्भ किया। 1837 ई. में प्रिन्सेप ने ब्राह्मी लिपि पढ़ने का दूसरी बार प्रयत्न किया। इस बार उसने सांची स्तूप की वेदिका और द्वार-स्तम्भों के लघु अभिलेखों की छापें एकत्रित कीं। इन छापों का अध्ययन करने पर उसे लगा कि सभी अभिलेखों के अन्त में दो शब्द एक से हैं और उनके पहले स (संस्कृत स्य) अक्षर हैं। अतः उसने अनुमान लगाया, किस को व्यक्तिवाचक नाम और उसके बाद के अक्षरों को दान या उपहार से सम्बन्धित कोई शब्द होना चाहिए। इस शब्द में पहले अक्षर में आ की मात्रा और दूसरे में अनुस्वार लगा था। अतः इस शब्द को ' दानं ' के रुप में पहचानने में उसे कोई कठिनाई नहीं हुई। प्रिन्सेप का 50 वर्षों का श्रम रंग लाया । उसनें (Modification of the Sanskrit Alphabet From 528 B.C.to A.D.1200) के नाम से एक चार्ट बनाया जिसमें 1800 वर्षों की पूरी भारतीय वर्णमाला वर्णित थी। इस सारिणी में प्रत्येक अक्षर के परिवर्तित रुप भी दशाये गये थे। प्रिन्सेप की इस सारिणी के साथ पुरालिपि शास्त्र के अध्ययन में एक नये युग का सूत्रपात हुआ जब भारत की प्राचीन वर्णमाला पुनः सजीव होकर मुखरित हो उठी।

खरोष्ठी लिपि का उद्‌वाचन

ब्राह्मी लिपि की अपेक्षा खरोष्ठी लिपि का पढ़ा जाना सरल था क्योंकि यूनानी सिक्कों पर दो भाषाओं का प्रयोग किया गया था। किन्तु इस सन्दर्भ में सबसे बड़ी कठिनाई यह थी कि ब्राह्मी लिपि के विपरीत इस लिपि में किस भाषा का प्रयोग हुआ है, निश्चित न था।

कर्नल टाड ने इण्डो- ग्रीक, शक,पह्लव और कुषाण शासकों के सिक्कों को एक बड़ी संख्या में एकत्रित किया था। ये सिक्के 175 ई.पू. से 200 ई. तक के थे और इनके एक ओर यूनानी लिपि में और दूसरी ओर खरोष्ठी लिपि में लेख उत्कीर्ण थे। 1824 ई. में टाड ने अनुमान लगाया था कि सिक्कों के दूसरी ओर की लिपि सासानी है।[15] 1830 ई. में जनरल वेंटुरा ने मणिक्याला स्तूप का उत्खनन कराया जिसमें सिक्कों के साथ खरोष्ठी लिपि में अंकित दो लेख भी प्राप्त हुए। किन्तु वे इन

Scanned by CamScanner

लेखों को पढ़ने में असफल रहे।[16] सर अलेक्जेण्डर बर्न्स ने यूनानी और खरोष्ठी लेख युक्त बहुत से सिक्के एकत्र किये। वह यूनानी लिपि पढ़ सका किन्तु खरोष्ठी लिपि न पढ़ सका।[17] 1833 ई. में प्रिन्सेप ने अनुमान लगाया कि आपोलोडोटस के सिक्कों के एक ओर की लिपि पह्लवी हैं और मणिक्याला स्तूप से प्राप्त लेखों की लिपि पाली (ब्राह्मी) है। किन्तु और अधिक अध्ययन करने पर उन्होने स्वयं अपना मत बदल दिया।

अफगानिस्तान में पुरातात्विक शोध करते समय मेसन ने पहली बार यह जाना कि सिक्कों के यूनानी लेख और खरोष्ठी लेख दोनों एक हैं। यह एक महान् उपलब्धि थी जिसने खरोष्ठी लिपि के उद्वाचन को सरल बना दिया। तब उसने मीनेण्डर, अपोलोडोटस और हरमावीज के सिक्के के लेख पढ़ लिये। मैसन ने अपनी खोज से प्रिन्सेप को भी अवगत कराया।[18] मैसन का अनुकरण करते हुए प्रिन्सेप ने खरोष्ठी लिपि में लिखे यूनानी राजाओं के बारह नाम तथा छह विरुद पढ़ लिये। उसने यह भी निर्धारित कर लिया कि यह लिपि दायें से बायें लिखी जाती है। लेकिन वह खरोष्ठी लिपि की भाषा प्राकृत के स्थान पर पह्लवी समझने में चूक कर गया जिससे लिपि पढ़ जाने का मार्ग पुनः अवरुद्ध हो गया । 1838 ई. में उसने महसूस किया कि लिपि की भाषा पालि है। इससे काम में पुनः गति आयी। अब उसने इस लिपि के सत्रह अक्षरों को पढ़ लिया।[19] तदन्तर छह अक्षरों को नॉरिस ने और शेष को कनिंघम ने पहचान लिया। इस प्रकार खरोष्ठी वर्णमाला पूरी तरह पढ़ ली गयी।[20]

ब्राह्मी और खरोष्ठी लिपियों के पढ़े जाने से भारतीय अभिलेखिकी का प्रथम चरण पूरा हुआ और पुरालिपिक अध्ययन एक मान्य विषय के रूप में प्रतिष्ठित हुआ। 1874 ई. में बर्नेल ने पहली बार Elements of South Indian Palaeography शीर्षक इस विषय का पहला ग्रन्थ प्रकाशित किया। तत्पश्चात् शोध पत्र-पत्रिकाओं में अभिलेखों की प्रतिलिपियां प्रकाशित होने लगीं। 1877 ई. कनिंघम ने अशोक के अभिलेख और 1888 ई. में फ्लीट ने गुप्त और उनके समकालिकों के अभिलेख प्रकाशित कराये।

19 वीं शती के अन्तिम दशक में गौरी शंकर हीराचंद ओझा और ब्यूलर ने उपलब्ध पुरालिपिक सामग्री का गम्भीर अध्ययन कर क्रमशः **प्राचीन लिपिमाला** (1894) और Indische Palaeographie (1896) शीर्षक ग्रन्थ प्रकाशित किये। भारतीय पुरालिपियों के अध्ययन हेतु आज भी ये प्रामाणिक कृतियां मानी जाती हैं।

Scanned by CamScanner

ऐतिहासिक भारतीय अभिलेख

कृष्ण दत्त वाजपेयी
कन्हैया लाल अग्रवाल
संतोष वाजपेयी

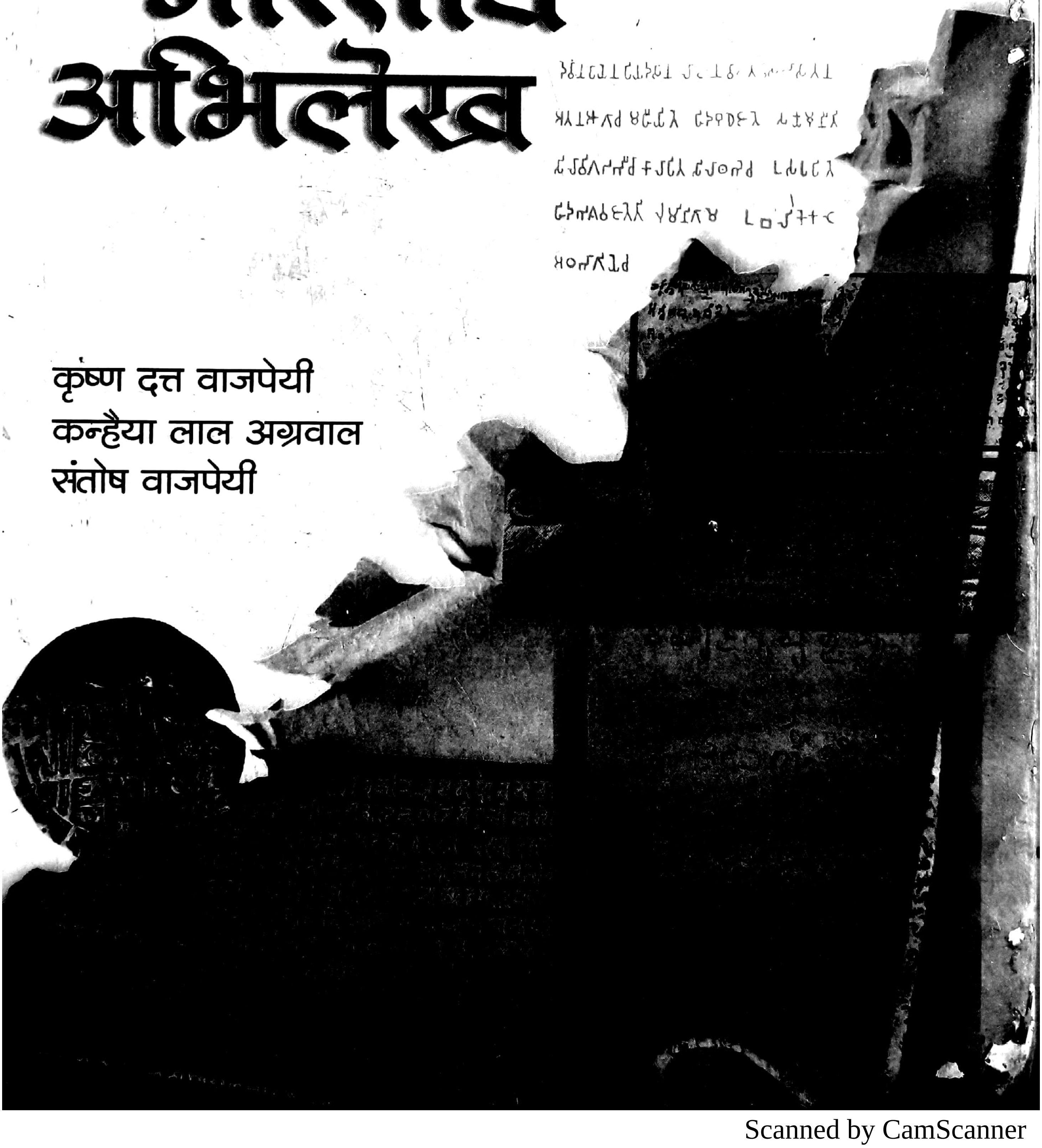

Scanned by CamScanner